यजुर्वेद संहिता

(सरल हिन्दी भावार्थ सहित)

सपादक :

वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

भगवती देवी शर्मा

Scanned with CamScanner

१११५. अश्विभ्यां चक्षुरमृतं ग्रहाभ्यां छागेन तेजो हविषा शृतेन। पक्ष्माणि गोधूमैः कुवलैरुतानि पेशो न शुक्रमसितं वसाते ॥८९ ॥

दोनों अश्विनीकुमारों ने ग्रहों के रूप में दो शाश्वत नेत्रों को निर्मित किया। उस हवि द्वारा उनके नेत्रों में तेज व्याप्त हुआ, जो अजा के दुग्ध से परिपक्व हुई थी। नेत्रों के नीचे वाले लोम गेहूँ के बाल से और बेरों से ऊर्ध्वलोम स्थापित किये, जो नेत्रों के शुक्ल और कृष्णरूप को संरक्षित करते हैं ॥८९ ॥

१११६.अविर्न मेषो नसि वीर्याय प्राणस्य पन्था ऽ अमृतो ग्रहाभ्याम्। सरस्वत्युपवाकैर्व्यानं नस्यानि बर्हिर्बदरैर्जजान ॥९० ॥

उस विराट् की नासिका में बल वृद्धि के लिए 'भेड़' कारण बनी। ग्रहों से अनश्वर प्राण का मार्ग प्रवहमान हुआ। सरस्वती ने यव अंकुरों से व्यान वायु प्रकट किया। बेरों और कुशाओं के द्वारा नासिका के लोम उत्पन्न हुए॥

१११७. इन्द्रस्य रूपमृषभो बलाय कर्णाभ्याᳪ श्रोत्रममृतं ग्रहाभ्याम्। यवा न बर्हिर्भ्रुवि केसराणि कर्कन्धु जज्ञे मधु सारघं मुखात् ॥९१ ॥

ऋषभ ने बल के निमित्त इन्द्र (इन्द्रियों) का रूप विनिर्मित किया। इन्द्र सम्बन्धी ग्रहों द्वारा अविनश्वर शब्दों को ग्रहण करने वाली श्रोत्र शक्ति से युक्त दोनों कानों की रचना हुई। जौ और कुशा से भौहों के बालों की उत्पत्ति की और बेर से मुख में मधु के सदृश लार की उत्पत्ति की ॥९१ ॥

१११८.आत्मन्नुपस्थे न वृकस्य लोम मुखे श्मश्रूणि न व्याघ्रलोम। केशा न शीर्षन्यशसे श्रियै शिखा सिᳪहस्य लोम त्विषिरिन्द्रियाणि ॥९२ ॥

उस विराट् इन्द्रदेव के शरीर में उपस्थभाग के और अधोभाग के लोम वृक (भेड़िया) के लोम रूप हुए। मुख में जो मूँछ और दाढ़ी के बाल हैं, वे व्याघ्र के लोम के रूप में हुए। शिर में यश के निमित्त बाल, शिखा शोभा के निमित्त और अन्य स्थानों के बाल सिंह के लोम रूप हुए ॥९२ ॥

१११९. अङ्गान्यात्मन् भिषजा तदश्विनात्मानमङ्गैः समधात् सरस्वती। इन्द्रस्य रूप ᳪ शतमानमायुश्चन्द्रेण ज्योतिरमृतं दधानाः ॥९३ ॥

अश्विनीकुमारों ने अनेकों प्राणियों द्वारा पूजित इन्द्रदेव के रूप को तथा उनकी पूर्ण आयु को, चन्द्रमा की आह्लादक ज्योति के साथ संयुक्त करके अनश्वरता प्रदान की है। अश्विनीकुमारों ने शरीर के अंगों को आत्मा के साथ संयुक्त किया और देवी सरस्वती ने उस आत्मा को अंगों के साथ सुनियोजित किया ॥९३ ॥

११२०.सरस्वती योन्यां गर्भमन्तरश्विभ्यां पत्नी सुकृतं बिभर्ति। अपाᳪ रसेन वरुणो न साम्नेन्द्रᳪ श्रियै जनयन्नप्सु राजा ॥९४ ॥

सरस्वतीदेवी अश्विनीकुमारों की पत्नी बनकर उत्तम प्रकार से उस विराट् इन्द्रदेव को धारण करती हैं। जल के अधिपति वरुणदेव जल के साररूप रसों से और सामबल से, ऐश्वर्य के निमित्त इन्द्रदेव को पुष्ट करते हैं। इस प्रकार देवी सरस्वती, इन्द्रदेव को जन्म देती हैं ॥९४ ॥

११२१.तेजः पशूनाᳪ हविरिन्द्रियावत् परिस्रुता पयसा सारघं मधु। अश्विभ्यां दुग्धं भिषजा सरस्वत्या सुतासुताभ्याममृतः सोम ऽ इन्दुः ॥९५ ॥

चिकित्सा करने वाले दोनों अश्विनीकुमारों और देवी सरस्वती ने शक्तियुक्त-वीर्ययुक्त पशुओं के दुग्ध-घृत को मधुमक्खियों की मधु के साथ संयुक्त करके इन्द्रदेव के लिए तेजस्वी पेय विनिर्मित किया। परिस्रुत दुग्ध से अमृत के सदृश शक्तिवर्द्धक सोम को तैयार किया। (ऐसे सौत्रामणी यज्ञकर्त्ताओं को नमन-वन्दन) ॥९५ ॥

Scanned with CamScanner

बल को धारण करने वाली, यज्ञ द्वारा वायुभूत होने वाली ओषधियों का रस पीने से इन्द्रदेव हर्ष को प्राप्त होकर प्राणपर्जन्य वर्षा से अन्नादि पदार्थों को सींचते हैं और बल-ऐश्वर्य से पवित्र करते हैं । और क्या ? और क्या (चाहिए) ? यह बोलते (पूछते) रहते हैं ॥२८ ॥

११५०. धानावन्तं करम्भिणमपूपवन्तमुक्थिनम् । इन्द्र प्रातर्जुषस्व नः ॥२९ ॥

हे इन्द्रदेव ! आप प्रातःकाल हमारे द्वारा समर्पित विविध धान्यों से युक्त दही, लपसी, सत्तू, मालपुए आदि मधुर आहार के सहित पुरोडाश और श्रेष्ठ स्तुतियों को ग्रहण करें ॥२९ ॥

११५१. बृहदिन्द्राय गायत मरुतो वृत्रहन्तमम् । येन ज्योतिरजनयन्नृतावृधो देवं देवाय जागृवि ॥३० ॥

हे मरुद्‌गण ! आप वृत्रासुर का हनन करने वाले इन्द्रदेव के लिए बृहत् साम का गान करें । यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों की वृद्धि करने वाले ऋत्विजों ने इसी सामगान द्वारा इन्द्रदेव के लिए चैतन्यरूप जाज्वल्यमान तेजस्विता को प्रकट किया ॥३० ॥

११५२. अध्वर्यो अद्रिभिः सुत ꣳ सोमं पवित्रऽ आनय । पुनीहीन्द्राय पातवे ॥३१ ॥

हे अध्वर्युगण ! आप पाषाण से अभिषुत हुए सोम को इस स्थान में लाएँ और इन्द्रदेव की तृप्ति के निमित्त इसे शोधित करें ॥३१ ॥

११५३. यो भूतानामधिपतिर्यस्मिँल्लोका ऽ अधि श्रिताः । य ऽ ईशे महतो महाँस्तेन गृहणामि त्वामहं मयि गृहणामि त्वामहम् ॥३२ ॥

परमपिता परमात्मा, जो सब प्राणियों के स्वामी हैं, जिनके अधीन रहकर समस्त लोक पोषण पाते हैं और जो महान् होकर सभी विभु पदार्थों को वश में करने वाले हैं । हे ग्रहपात्र ! हम आपकी (उस परमात्मा से प्राप्त) सामर्थ्य को स्वीकार करते हैं और आपको ग्रहण (स्थापित) करते हैं ॥३२ ॥

११५४. उपयामगृहीतोस्यश्विभ्यां त्वा सरस्वत्यै त्वेन्द्राय त्वा सुत्राम्णऽ एष ते योनिरश्विभ्यां त्वा सरस्वत्यै त्वेन्द्राय त्वा सुत्राम्णे ॥३३ ॥

हे ओषधि रूप रस ! आप दोनों अश्विनीकुमारों के निमित्त अभिषुत होकर उपयाम पात्र में ग्रहण किये गये हैं । हम आपको देवी सरस्वती के लिए, इन्द्रदेव के लिए और उत्तम संरक्षण के लिए ग्रहण करते हैं । यह आपका उत्पत्ति स्थान है । दोनों अश्विनीकुमारों, सरस्वती और इन्द्रदेव की अनुकम्पा से हम सुरक्षित हों ॥३३ ॥

११५५. प्राणपा मे अपानपाश्चक्षुष्पाः श्रोत्रपाश्च मे । वाचो मे विश्वभेषजो मनसोसि विलायकः ॥३४ ॥

हे ओषधे ! आप हमारे प्राणों के रक्षक, अपानों के रक्षक, नेत्रों के रक्षक और श्रोत्रों के रक्षक हैं । हमारी वाणी सहित समस्त इन्द्रियों की अपने दिव्य ओषधीय गुणों से रक्षा करें । आप इन इन्द्रियों के चालक मन को विषयों से विरक्त कर (उसका आत्मा में) विलय करें ॥३४ ॥

११५६. अश्विनकृतस्य ते सरस्वतिकृतस्येन्द्रेण सुत्राम्णा कृतस्य । उपहूतऽ उपहूतस्य भक्षयामि ॥३५ ॥

हे ओषधे ! हम अश्विनीकुमारों द्वारा संस्कारित, देवी सरस्वती द्वारा बल से पुष्ट हुए और उत्तम रक्षक इन्द्रदेव द्वारा उत्पन्न आपको सादर आमंत्रित करते हैं अर्थात् स्वस्थ दीर्घजीवन की कामना से आपका सेवन करते हैं ॥३५ ॥

Scanned with CamScanner

१२०४. ता नऽ आ वोढमश्विना रयिं पिशङ्गसन्दृशम्। धिष्ण्या वरिवोविदम् ॥८३ ॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप हम सबको धारण करने वाले हैं। आप दोनों हमारे निमित्त पीतवर्ण, स्वर्णमय, वृद्धिकारक ऐश्वर्य-सम्पदा प्राप्त कराएँ ॥८३ ॥

१२०५. पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती। यज्ञं वष्टु धियावसुः ॥८४ ॥

सबको पवित्रता प्रदान करने वाली, अन्न के द्वारा यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों को सम्पादित करने वाली देवी सरस्वती हमारे यज्ञ को धारण करें तथा हमें अभीष्ट वैभव प्रदान करें ॥८४ ॥

१२०६. चोदयित्री सूनृतानां चेतन्ती सुमतीनाम्। यज्ञं दधे सरस्वती ॥८५ ॥

उत्तम और सत्य वाणियों द्वारा सन्मार्ग की प्रेरणा देने वाली, कुमति को दूर कर सुमति जगाने वाली सरस्वती देवी हमारे यज्ञ को धारण करती हैं ॥८५ ॥

१२०७. महो अर्णः सरस्वती प्र चेतयति केतुना। धियो विश्वा वि राजति ॥८६ ॥

अनन्त अन्तरिक्ष से दिव्यरसों की वर्षा द्वारा सत्कर्म की प्रेरणा देने वाली देवी सरस्वती सभी की बुद्धियों को प्रकाशित करती हैं ॥८६ ॥

१२०८. इन्द्रा याहि चित्रभानो सुताऽ इमे त्वायवः। अण्वीभिस्तना पूतासः ॥८७ ॥

हे विलक्षण कान्तिमान् इन्द्रदेव ! आप हमारे इस यज्ञ-स्थान में पधारें। आपकी कामना करते हुए, हमने अपनी अँगुलियों से निचोड़कर पवित्र सोमरस आपके लिए तैयार किया है ॥८७ ॥

१२०९. इन्द्रा याहि धियेषितो विप्रजूतः सुतावतः। उप ब्रह्माणि वाघतः ॥८८ ॥

हे इन्द्रदेव ! अपनी अन्तःप्रेरणा से प्रेरित होकर हमारे इस यज्ञ-स्थल में आएँ। आपकी स्तुति करने वाले ऋत्विग्गण, सोम का शोधन-संस्कार करने वाले हैं, सो आप समीप आकर इन हवियों को ग्रहण करें ॥८८ ॥

१२१०. इन्द्रा याहि तूतुजान उप ब्रह्माणि हरिवः। सुते दधिष्व नश्चनः ॥८९ ॥

हरिसंज्ञक घोड़ों से यात्रा करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप इस यज्ञ में प्रतीक्षारत ऋत्विग्गणों के समीप शीघ्र ही आगमन करें। सोम के निष्पादित होने पर हमारे द्वारा समर्पित हवियों को ग्रहण कर तृप्त हों ॥८९ ॥

१२११. अश्विना पिबतां मधु सरस्वत्या सजोषसा। इन्द्रः सुत्रामा वृत्रहा जुषन्ताꣳ सोम्यं मधु ॥९० ॥

देवी सरस्वती के साथ समान मन वाले होकर दोनों अश्विनीकुमार मधुर सोमरस का पान करें और उत्तम रक्षा करने वाले, वृत्रासुर का हनन करने वाले इन्द्रदेव भी इस मधुर सोमरस का सेवन करें ॥९० ॥

* * *

Scanned with CamScanner

१७९९. पितुं नु स्तोषं महो धर्माणं तविषीम्। यस्य त्रितो व्योजसा वृत्रं विपर्वमर्दयत् ॥७ ॥

हम बलोत्पादक, धारण-योग्य अन्न की प्रार्थना करते हैं, जिसकी शक्ति-सामर्थ्य से त्रिलोक-अधिपति इन्द्रदेव ने वृत्रासुर को खण्ड-खण्ड करके मर्दित किया था ॥७ ॥

१८००. अन्विदनुमते त्वं मन्यासै शं च नस्कृधि। क्रत्वे दक्षाय नो हिनु प्र णऽ आयूꣳषि तारिषः ॥८ ॥

हे अनुमते (विशिष्ट देवता) ! आप हमें कल्याणकारी सुख प्रदान करें। बुद्धिबल एवं दक्षता हेतु हमें संवर्धित करें तथा हमारी आयुष्य को निश्चित ही प्रवृद्ध करें अर्थात् बढ़ाएँ ॥८ ॥

१८०१. अनु नोद्यानुमतिर्यज्ञं देवेषु मन्यताम्। अग्निश्च हव्यवाहनो भवतं दाशुषे मयः।

हे अनुमते ! आज आप हमारे यज्ञ को देवताओं के निमित्त अनुकूल बनाएँ और हविवाहक अग्निदेव भी हविष्य प्रदान करने वाले यजमान हेतु आनन्दप्रद हों ॥९ ॥

१८०२.सिनीवालि पृथुष्टुके या देवानामसि स्वसा।जुषस्व हव्यमाहुतं प्रजां देवि दिदिड्ढि नः॥

अतिकेशयुक्त सम्पूर्ण प्रजाओं का पालन करने वाली, हे सिनीवाली देवि ! आप देवताओं की बहिन हैं, ऐसी आप हमारे द्वारा विशेष प्रकार से प्रदत्त आहुतिरूप हविष्य को प्रीतिपूर्वक ग्रहण करें। हे दिव्यगुण सम्पन्न देवि ! हमारे लिए सन्तानरूप प्रजा को उपलब्ध कराएँ ॥१० ॥

१८०३. पञ्च नद्यः सरस्वतीमपि यन्ति सस्त्रोतसः। सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित् ॥११ ॥

समान स्रोत वाली (श्रेष्ठ प्रवाहशील) पाँच सरिताएँ (नदियाँ) जिस प्रकार महानदी सरस्वती में समाहित हो जाती हैं, उसी प्रकार वही सरस्वती देश में पाँच (नदियों के) रूप में (प्रसिद्ध) हुई (अर्थात् विद्या, पाँच प्रकार की प्रतिभाओं — श्रमपरक, विचारपरक, अर्थपरक, कलापरक और भावपरक को संयुक्त करके उन्हें प्रगतिशील बनाती है) ॥११ ॥

१८०४. त्वमग्ने प्रथमो अङ्गिरा ऽ ऋषिर्देवो देवानामभवः शिवः सखा। तव व्रते कवयो विद्मनापसोजायन्त मरुतो भ्राजदृष्टयः ॥१२ ॥

हे अग्ने ! आप शारीरिक अंगों के प्राणरूप, सर्वद्रष्टा, दिव्यतायुक्त, कल्याणकारी और देवताओं के सर्वश्रेष्ठ मित्र हैं।आपके व्रतानुशासन से क्रान्तदर्शी और कर्मों के ज्ञाता मरुद्गण श्रेष्ठ-तीक्ष्ण आयुधों से युक्त हुए हैं ॥१२ ।

१८०५. त्वं नो अग्ने तव देव पायुभिर्मघोनो रक्ष तन्वश्च वन्द्य। त्राता तोकस्य तनये गवामस्यनिमेषꣳरक्षमाणस्तव व्रते ॥१३ ॥

हे अग्निदेव ! आप वन्दना के योग्य हैं। अपने अनुशासन के व्रती इस ऐश्वर्यशाली यजमान का संरक्षण करें। हमारी शारीरिक क्षमता को अपनी सामर्थ्य से पोषित करें। शीघ्रतापूर्वक संरक्षित करने वाले आप यजमान के पुत्र-पौत्रादि-सन्तानों और गवादि पशुओं के संरक्षक हों ॥१३ ॥

१८०६. उत्तानायामव भरा चिकित्वान्त्सद्यः प्रवीता वृषणं जजान। अरुषस्तूपो रुशदस्य पाजऽ इडायास्पुत्रो वयुनेजनिष्ट ॥१४ ॥

पृथ्वी से उत्पन्न अग्निदेव विशिष्ट ज्ञानयुक्त कर्म के साथ प्रादुर्भूत हुए हैं, इनके प्रज्वलित तेज को जो अरणि ग्रहण करे, वह अरणि प्रेरित होकर ज्वलनशील अग्नि को शीघ्र ही उत्पन्न करती है ॥१४ ॥

Scanned with CamScanner